# कामकाजी महिलाएं और उनकी समस्याएं

डॉ0 महेषचंद्र चौरसिया
811213, बिहार
रोहिणी आवास 12, हवेली खडगपुर,मुंगेर
मो - 6207953695

सामाजिक व्यबस्था बहुत कुछ आर्थिक ढांचा पर निर्भर करतीा है। मनुष्य की सारी चेतनाएं लगभग अर्थ पर टिकी होती हैं। आर्थिक रीढ़ कामकाजी महिलाएं और उनकी समस्याएं

समाज और राष्ट्र की रीढ़ होती है। उसके वगैर अन्य चेतनाएं निस्तेज पड़ जाती हैं। 21वीं सदी भारी बदलाओं के दौर का साक्षी है। जीवन के सभी क्षेत्रों में व्यापक परिवर्तन हुआ हैं। परिवर्तन के इस दौर में दुनिया के सभी लोग विकास की आंधी में बहते नजर आ रहे हैं। तेजी से बदलते समय में ज्यादा से ज्यादा प्रतिक्रियाएं और ऑर्ज्जवेषन ही हो सकते हैं। आधुनिकता बोध की प्रवृत्ति द्न्द्वात्मक भौतिकवाद की चरम स्थिति है।''आधुनिकता का ताल्लुक पूंजी और विज्ञान के विकास के साथ हैं, जो नगरीकरण और औद्योगीकरण की प्रक्रिया को तेज करता है।''1

भारत में स्वतंत्रता के पष्चात कई परिवर्तनों का आगमन हुआ है। इनका प्रभाव पारिवारिक और सामाजिक जीवन पर भी पडा है। सरकार ने कई योजनाओं को लागू किया,जिनसे प्रगति का वातावरण सृष्ट हुआ। महिलाओं में षिक्षा का प्रचार हुआा; उन्हें अपने अधिकार का बोध हुआ। महिलाएं कई क्षेत्रों म`अपनी हिस्सेदारी प्रकट करने लगीं। नारी स्वतंत्रता के उगते प्रभात में नई आषाओं का संचार हुआ। नारियें के अधिकार और कर्तव्य की व्याख्या होने लगी। नवजागरण की इस पुनीत वेला में अपने युग की अति महत्वपूर्ण मोग यह है कि नारी उत्कर्ष को समय की सबसे बडी मांग को आवष्यकता माना जाय। वगैर क्रांति और विद्रोह के समाज में बदलाव नहीं आया है। ''सामाजिक क्रांति समाज के विकास की निष्चित मंजिलों पर जीवन की भौतिक अवस्थाओं और आंतरिक अन्तर्विरोधों से उद्भूत होती है। विकास का एक खास मंजिल पर उत्पादक षक्तियां
उत्पादन संबंधों से टकराने लगती हैं। इनकी टक्कर की सामाजिक क्रांति की वस्तुगत आर्थिक बुनियाद होती है।''2

महिलाओं का कामकाजी होना भी क्रांति की एक बुनियाद है। स्त्री–पुरूष मिलकर यदि आर्थिक उपार्जन कर लेता है,तो इससे परिवार ही नहीं देष के विकास की संभावना भी बढ़ जाती है। महिलाओं का कामकाजी होना कई बातों पर निर्भर है– पुरूषों द्वारा अनदेखी , परिवार का आर्थिक बोझ तथा मान सम्मान की भावना इत्यादि।

भारतीय महिलाओं का एक विराट रूप है। वह अपने आप में चाहे पूरी हो, भीतर अनेक विषमताएं भरी हुई हैं। महिलाओं का एक बडा वर्ग सड़क पर मेहनत मजदूरी कर अपना जीवन गुजार लेता है। उनके बच्चे किसी वृक्ष की छाया में धरती मां की गोद में बड़े होत`हैं, वे सुबह से षाम तक जीविको पार्जन में लगी रहती हैं। गरीबी से धिरा उनका जीवन , उनके बच्चे के विकास को अवरूद्ध कर देता है।

भारत के वे फूल खिलने से पहले मुरझा जाते हैं। यही स्थिति नगरीय कामकाजी महिलाओं की है। दफ़्तर में काम करने वाली महिलाओं के बच्चे मां के पूरे प्यार से वंचित रह जाते हैं। इस बात का दर्द माताओं को भी है। एक ओर वह आर्थिक उन्नति की होड़ में आगे बढ़ना चाहती है। तो दूसरी ओर उसका स्त्री स्वभाव चोट खाता है। निसंदेह''आज की औरत संघर्ष करती हुई औरत, घर और घर के बाहर लड़ती हुई औरत,अपनी स्वाभाविक गति को खोती जा रही है। षहर और महानगर उसकी सहजता को लील रही है।''3

भारतीय जनजीवन पर पष्चिम का अपेक्षाकृत प्रभाव पड़ा है। पष्चिम में स्त्रियां पुरूषों के साथ मिलकर काम करती है। षिक्षा और विज्ञान की प्रगति में स्त्रियों का बड़ा योगदान रहा है।
पाष्चात्य स्त्रियों की प्रेरणा भारतीय नारियों को मिली और वे आत्म निर्भर बनने की सोचने लगी। इसमें दो राय नहीं कि ''भारतीय समाज में स्वतंत्रता के बाद अनेक महत्वपूर्ण परिर्वतन हुए हैं, परन्तु उन

महत्वपूर्ण परिवर्तनों में सर्वाधिक आकर्षक और साहसिक बदलाव स्त्री का धर की चहारदीवारी से बाहर निकलना और बाहरी दुनियां की हलचल में षामिल होना है।''4

वर्तमान समय में महिलाओं का कामकाजी होना राष्ट के हित में काफी महत्वपूर्ण है,पर इस मर्दवादी समाज में स्त्री की हैसियत पर आज भी उंगली उठती है। कामकाजी महिलाएं नौकरी करते हुए भी आर्थिक रूप से मिलने वाली तनख्वाह पर पति और घरवालों की नजरें लगी रहती हैं। निर्ममता से हिसाब मांगा जाता है। अतः, आर्थिक स्वतंत्रता की बात बेमानी लगती है। इतना ही नहीं उसे दोहरी जिम्मेदारी निभानी पड़ती है। ''स्त्री की अपनी प्राकृतिक विषेषताएं हैं,परन्तु दोहरे मानदंडों ने जो षर्मनाक स्थिति पैदा की है,वे स्त्री को मात्र'स्त्रीत्व' के बंघनों में बांघते हैं।''5

कामकाजी महिलाओं को घर और बाहर दोनों जिम्मेदारियों का निर्वाह करना पड़ता है। प्रायः देखा जाता है कि पति और उसके परिवार के अन्य सदस्यों का सहयोग सहज रूप में नहीं मिल पाता। , पति भी अमानवीय व्यबहार करने से बाज नहीं आते। ऐसी स्थिति में मनोबल टूटना स्वाभाविक है। यहां तक कि दाम्पत्य संबंध में में भी कटुता आ जाती है। नोंक झोंक आम बात हो जाती है। इस दोहरी भूमिका में कामकाजी महिलाओं कों मानसिक तनाओं से होकर गुजरना पड़ता हैं बाहर का काम, फिर धर का काम , बैलों की तरह जुतना हो जाता है। स्पष्ट है कि कामकाजी महिलाओं की समस्याएं आम महिलाओं की अपेक्षा अधिक हैं– खासकर पुरूषों के साथ टकराहट बनी रहती है,''स्त्री –पुरूष विषमता को भारत की सबसे बड़ी व गंभीर सामाजिक विफलता मानने वाले अर्थषास्त्री डॉ0 अमर्त्यसेन की स्पष्ट निष्पत्ति है कि स्त्री –मुक्ति और स्त्री –सषक्तिकरण केवल नारीवादी मुद्दा नहीं है,वल्कि वह सामाजिक प्रगति का एक अभिन्न अंग है।''6

कामकाजी महिलाओं की सबसे बड़ी समस्याएं हैं कि उसके बच्चे बिगड़ जाते हैं खासकर वैसे बच्चे जिनकी मां बाहर काम पर जाती हैं और बच्चे धर पर रहते है।– छोटे बच्चे का पालन–पोषण ठीक से नहीं हो पाता।यहां तक कि परिवार वालों की सवालिया नजरें उन्हें हमेषा चुभती रहती हैं। किसी दिन देर से दफ़तर से धर आती हैं– कई सवाल खड़े कर दिये जाते हैं।हर बात में षक और टीका टिप्पणी की जाती है। फिर यह कैसे कहा जाय कि समाज में नारियौं की स्थितियौं मैं आमूलचूल परिवर्तन हुआ है। अगर हुआ भी है तो दिखवाटी ज्यादा है। ''जमीनी हकीकत बताती है कि रफ़तार के इस युग में सामाजिक सुघार की प्रक्रिया अत्यंत धीमी गति से चल रही है। सामंती पारंपरिक मूल्यों का आधिपत्य बना हुआ है, जिसकी षिकार अधिकतर महिलाएं हैं।''7

कामकाजी महिलाओं को अपने उपर बहुत घ्यान रखना होता है। उसकी बातचीत , उसका आचरण, हंसना–बोलना, उसका आंचल, पहनावा–ओढ़ना सबकुछ मर्यादित रहे। दफ़तर या कार्य–स्थल पर उसका बॉस या सहकर्मी गलत अर्थ न लगााये। थोड़ी सी असावधानी से छेड़–छाड़, सहयोगियों द्वारा छींटा–कसी, बॉस द्वारा षारीरिक षोषण, मानसिक यातनाएं इत्यादि झेलनी पड़ती हैं। स्त्री देह की सुंदरता कभी कभी पुरूष को बर्बर पषु बना देता है। बल्कि पषु से भी पषुतर, क्योकि ''देह, स्त्री का एकमात्र पहचान के रूप में उसका गुण भी है और गाली भी। जबतक वह पुरूष की वासना के नियंत्रण में है, वह सौंदर्य है, परंतु जब नियंत्रण से बाहर है तो भर्त्सनीय और दंडनीय है।''8

सरकारी संस्थानों में षारीरिक दोहन कम होने लगा है। गैर सरकारी संस्थानों में ऐसी धटनाएं होती रहती हैं। श्रमिक महिला मजदूरों की स्थिति अच्छी नहीं होती इसलिए पति उसे अनैतिक कार्यो के लिए दबाव देता है। अतः, बीमारी ,आर्थिक परेषानी, बच्चा का पालन, और परिवारवालों के असहयोग तथा स्वामियों द्वारा दुराचरन से वह संधर्ष करती है। इससे उनके मन में क्षोभ और असंतोष पैदा होता है–''विषमतापूर्ण परिवेष संवेदनषील मनुष्य के मन में क्षोभ और विद्रोह की सृष्टि करता है। उत्पीड़ित मनुष्य अपनी मुक्ति के साथ अपने जेसे उत्पीड़ितों की मुक्ति चाहता है।''9

कुछ कामकाजी महिलाएं आकर्षण और सैक्स की भूख से गुमराह हो जाती हैं। भौतिक चकाचौंघ में भविष्य को वे नहीं देख पातीं और चतुर पुरूष के द्वारा ब्लैकमेल की षिकार हो जाती हैं। अनुचित चाहतें और कमजोरियों का कुछ लोग पूरा –पूरा लाभ उठाते हैं, और वे अपने आपको रोक नहीं पातीं– यह स्थिति आये ही नहीं चेतनषील होना होगा–''भोग–उपभोग की वस्तु बनने से इंकार की चेतना ही वस्तुतः देह से उपर उठने की चेतना है।''10 लेकिन, स्त्री वहां क्या करे जब वह कुछ न करे, कुछ न चाहे, पर मर्द जबर्दस्ती उसके साथ बलात्कार करे, राजनीति में रहने वाली मलिाओं को भी इज्जत गंवानी पड़ी है।''स्वतंत्रता के बाद विभिन्न आंदोलनों के दौरान महिला प्रतिनिधिया को बलात्कार भोगना पड़ा।''11

वर्तमान भौतिकवादी चकाचौंध में जहां समाज में नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है, वहीं भोगवादी संस्कृति का प्रभाव भी हमारे बीच बढ़ा है। अंधानुकरण की प्रवृत्ति स्त्रियों में देखी जा रही है। मसलन अपने 'कैरिअर' को भी दांव पर लगा देती हैं। ''भौतिकवादी मषीनी सामाजिक व्यवस्था में हर परिवार अपने नैतिक मूल्यों को खोता जा रहा है। हर एक रिष्ते नाते,लाभ–हानि की कसौटी पर खड़े हुए हैं। पष्चिमी सभ्यता के पीछे दौड़ने वाले परिवार अपने निजी नैसर्गिक सुख से वंचित होते जा रहे हैं।''12

समाज में ऐसे भी लोग हैं जो कहते हैं कि स्त्रियों की पूजा होनी चाहिये, वे श्रद्धा की देवी हैं, धैर्यवती और करूणा की मूर्ति हैं, उनका सम्मान होना चाहिए, किन्तु व्यवहार की कसौटी पर ऐसी बातें आयी गई हो जाती हैं। इसी समाज के कुछ लोगों द्वारा यह भी कहा जाता है कि स्त्रियों का काम पर जाने से अपराध बढ़ता है। युवा पीढ़ी बिगड़ जाती है। ऐसे व्यक्ति कामकाजी महिलाओं के विरूद्ध अफवाह फेलाने से बाज नहीं आते, जबकि विद्वानों का विचार है कि महिलाएं यदि पुरूष के साथ कंधा से कंधा मिलाकर चलती हैं तो स्त्री–भेद की समस्या कम हो जाती है। यहां तक कि''स्त्री जब विभिन्न क्षेत्रों में उत्तरदायित्व का वहन करती है तो हिंसा और अपराध में गिरावट आती है।''13

परम्परावादी कामकाजी महिलाओं की भर्त्सना भी करते हैं और बुरी नजर से ताकते भी हैं । चौखट के भीतर पर्दा में रहने तक ही स्त्री को स्त्री जीवन की सार्थकता मानते हैं यहां तक कि''स्त्री के मातृत्व को धरती और बीज जैसे रूपकों से जोड़कर उसकी सार्थकता को मातृत्व तक सीमित किया गया है।''14 अस्तु, उपलब्ध व्यवस्था में नारी की पहचान का संकट स्त्री चिंतन का आयाम है। नई सभ्यता की नई स्त्री ने अपनी अस्मिता को पहचान देने का भरपूर प्रयत्न किया है। महिलाएं अपने व्यक्तित्व के विकास और आर्थिक आवष्यकताओं की पूर्ति के लिए घर से बाहर निकलती हैं नतीजतन 'घर और बाहर' के प्रष्नों का उन्हें सामना करना पड़ता है।

अपनी नाजुक परिस्थितियों के लिए खुद स्त्रियां भी जिम्मेदार हैं। एक तो वह ममतामयी होती और सहज ही किसी पर विष्वास कर लेती है।''नारी के हृदय में गंभीर ममता–सजल–
वीर–भाव उत्पन्न होता है। वह पुरूष के उग्र षौर्य से अधिक उदात्त और दिव्य रहता है।''15 अपने इन्ही नैसर्गिक गुणों के कारण घर और बाहर सभी जगह सम्मान पाती हैं और अनुचित दबावों को भी झेलती हैं। काम करते हुए अनुचित दबावों के कारण वे न केवल मानसिक तनाव में रहती हैं,अपितु हंसी का पात्र भी बन जाती है। अधिकारियों तथा सहकर्मियो द्वारा अनुचित दबावों की भाषा भी षर्माने जैसी होती है। यथा– ''हैलो मैडम, बड़ी लंबी छुट्टी ले ली है,कभी हमें भी याद कर लिया करें।'' इसतरह के भाषायी व्यवहार से कामकाजी महिलाएं मनोवैज्ञानिक दबाव झेलती हैं। महिलाओं के प्रति इस प्रकार की बातचीत और व्यवहार अषिष्ट ही नहीं होती अमर्यादित भी है। कभी –कभी तो नौकरी भी उन्हें छोड़ देनी पड़ती है। क्योंकि सहकर्मियों तथा अधिकारियों की असामान्य हंसी मजाक, उसका द्विअर्थी संवाद, कामुक दृष्टि से देखना सहन नहीं हो पाता। ऐसी स्थिति में नौकरी छोड़ देना समस्या का समाधान नहीं है।,बलिक ऐसी असहज बातों में महिलाएं दिलचस्पी न लें और न पुरूषों को प्रोत्साहन दें। क्योंकि पुरूष छल– बल तथा प्रलोभन देकर उसकी हंसती खेलती जिंदगी को उदासीन बना देता है। कभी घरवालों से तंग होती है, बाहर में बाहर वालों से परेषान रहती है। भारतीय स्त्रियां अपनी गरीबी और विपन्नता से उतना परेषान नहीं होतीं जितना कि पुरूषों की गिद्ध दृष्टि से सहमी रहती हैं। वे काम से जी नहीं चुराती ,पर काम करती हुई पुरूषें के आचरण से गंभीर जरूर बनी रहती हैं। पुरूष वर्ग की अपेक्षा''नारी सदैव सिंसियर होती है, कर्तव्यनिष्ठ होती है, समझदार होती है , क्षमाषील होती है और समझौता करके जीना चाहती हैं वह समय और अपनी योग्यता का भरपूर उपयोग करती है। वह स्वाभिमानी होती है,उसके परंपरागत आदर्षवादी संस्कार होते हें,इसलिए वह मर्यादित रूप में जीना चाहती है।''16

महिलाएं नौकरी करते हुए भी गुलामी सहती है। वे अपने कमाये पैसे इच्छानुसार खर्च नहीं कर सकतीं। उसकी विडंबना यह भी है कि अपने बारे में कोई निर्णय नहीं ले सकतीं। निर्णय नौकरी का हो या विवाह का ,अथवा किसी कार्य का हेा वह स्वधीन नहीं है। माता–पिता यदि नौकरी करा भी देते हैं तो विवाहोपरांत ससुराल वालों की इच्छा पर निर्भर हे कि वह नौकरी करने दे अथवा नहीं।''संरचनात्मक परिवर्तन द्वारा ही पुरूष पौरूषीय दुराग्रह से मुक्त किया जा सकता है। अगर स्त्रियां खुद को मुक्त कर लेती हैं तो अपने दमनकर्तओं को भी मुक्त करा लेंगी।''17

अतः, महिलाओंकी समस्याएं किसी कानून से नहीं; समाज की समझदारी तथा नारी के प्रति बदलते दृष्टिकोण से हल होंगी। संविधान और कानून ने समानता के अधिकार दिये हैं–स्त्रियां उनसे

हल पा सकती हैं, लेकिन पाष्चात्य देषों का अंधानुकरण कर उन समस्याओं से निजात कदाचित वे नहीं पा सकतीं। स्वच्छंद नारी की अपेक्षा सभ्य और सुसंस्कृत नारी समाज में सम्मान पूर्वक सुरक्षित और संरक्षित रह सकती हैं। अपने मर्यादित आचरण से दुराचारी को भी सदाचारी बना सकती हैं।

संदर्भ सूचीः


1. विनोद षाही, 'वर्तमान साहित्य',जुलाई,2007, पृष्ठ सं0 25
2. वि0 अफनास्येव : मार्क्सवादी दर्षन, पृष्ठ सं0 310–11
3. संघ्या गंगराडे, 'आज की कविता में नारी अस्तित्व'', 'सम्मेलन पत्रिका, भाग–90, अंक–4, पृष्ठ सं0 159
4. सरोजनी वि0 आर्य : कामकाजी नारी का द्वन्द्व और क्रूर यथार्थ, 'भाषा', नवंबर–दिसम्बर, 1992, पृष्ठ सं0 61
5. रेखा कस्तवार : स्त्री चिंतन की चुनौतियां, राजकमल प्रकाषन, 2009, पृष्ठ सं0 25
6. रवीन्द्र कुमार पाठक : नारीवादी अर्थषास्त्र के प्रयोक्ता अमर्त्यसेन, वर्तमान साहित्य, मार्च, 2008,पृष्ठ सं0 45
7. कुसुम मीतल : कानून और समाज, 'वर्तमान साहित्य', जून, 2008 पृष्ठ सं0 45
8. दिनेष कुमार द्विवेदी : मैत्रेयी पुषा के उपन्यासों में स्त्री विमर्ष का स्वरूप, सम्मेलन पत्रिका, भाग, 92, संख्या–1, प्ष्ठ सं0 201
9. डॉ0 आलोक गुप्ता : मुक्तिबोधः युगचेतना और अभिव्यक्ति, गिरनार प्रकाषन, पिलाजी गंज, महेसाना, 1985, पृष्ठ सं0 68
10. बलराम : आजकल, जुलाई, 2002, पृष्ठ सं0 8
11. पुलिस अनुसंधान एवं विकास व्यूरो, दिल्ली द्वारा 1983 में दर्ज भारत में बलात्कार के आंकड़े।
12. डॉ0 पी0 केद्ध खरे : बिखरते परिवारोंमें वेदना के स्वर, राजभाषा भारती, अप्रैल–जून, 2003, पृष्ठ सं0 17
13. प्दमा पण्डेल : 'गांव पंचायत में महिलाओं की भागी दारी', 'कथादेष', नवंबर, 2005, पृष्ठ 40
14. सुधीष पचौरी : स्त्री देह के विमर्ष, आत्माराम एण्ड सन्स, 2000, पृष्ठ, 81
15. म्हादेवी वर्मा : सुभद्रा कुमारी चौहान, 'स्मृतियां', अनुपम प्रकाषन, पटना,1990, पृष्ठ सं0 75

16. स्रोजिनी वि0 आर्य : कामकाजी महिलाओं काद्वन्द्व और क्रूर यथार्थ, भाषा, नवंबर,–दिसंबर, 1992,

17. र्ज्मन ग्रीयर, द फीमेल यूनेक का हिंदी यपांतरण, 'विद्रोही स्त्री', अनुवादक, मधु0 बी0 जोषी, राजकमल प्रकाषन, 2001, पृष्ठ सं0 19